प्रगतिवादी कवि रामधारी सिंह 'दिनकर'

प्रो. रश्मि कुमार
हिंदी और आधुनिक भारतीय भाषा विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय,लखनऊ

संक्षिप्त सारः
रामधारी सिंह 'दिनकर' छायावादोत्तर काल एवं प्रगतिवादी. कवियों में सर्वश्रेष्ठ कवि थे। दिनकर जी ने राष्ट्रप्रेम, लोकप्रेम आदि विभिन्न विषयों पर काव्य रचना की। उन्होंने सामाजिक और आर्थिक समानता और शोषण के खिलाफ कविताओं की रचना की। एक प्रगतिवादी और मानववादी कवि के रूप में उन्होंने ऐतिहासिक पात्रों और घटनाओं को ओजस्वी और प्रखर शब्दों का तानाबाना दिया। ज्ञानपीठ से सम्मानित उनकी रचना उर्वशी की कहानी मानवीय प्रेम, वासना और सम्बन्धों के इर्द–गिर्द घूमती है। रामधारी सिंह 'दिनकर' हिन्दी के प्रमुख लेखक, कवि व निबन्धकार थे। वे आधुनिक युग के श्रेष्ठ वीर रस के कवि के रूप में स्थापित हैं। 'दिनकर' स्वतन्त्रता पूर्व एक विद्रोही कवि के रूप में स्थापित हुए और स्वतन्त्रता के बाद 'राष्ट्रकवि' के नाम से जाने गये। वे छायावादोत्तर कवियों की पहली पीढ़ी के कवि थे। एक ओर उनकी कविताओ में ओज, विद्रोह, आक्रोश और क्रान्ति की पुकार है तो दूसरी ओर कोमल श्रृंगारिक भावनाओं की अभिव्यक्ति है।

शब्द संकेत : *रामधारी सिंह दिनकर, छायावादोत्तर, प्रगतिवादी, निबन्धकार, कवि एवं सर्वश्रेष्ठ*

१.विषय प्रवेश

रामधारी सिंह 'दिनकर' छायावादोत्तर काल एवं प्रगतिवादी. कवियों में सर्वश्रेष्ठ कवि थे। दिनकर जी ने राष्ट्रप्रेम, लोकप्रेम आदि विभिन्न विषयों पर काव्य रचना की। उन्होंने सामाजिक और आर्थिक समानता और शोषण के खिलाफ कविताओं की रचना की। एक प्रगतिवादी और मानववादी कवि के रूप में उन्होंने ऐतिहासिक पात्रों और घटनाओं को ओजस्वी और प्रखर शब्दों का तानाबाना दिया। ज्ञानपीठ से सम्मानित उनकी रचना उर्वशी की कहानी मानवीय प्रेम, वासना और सम्बन्धों के इर्द–गिर्द घूमती है।रामधारी सिंह 'दिनकर' हिन्दी के प्रमुख लेखक, कवि व निबन्धकार थे। वे आधुनिक युग के श्रेष्ठ वीर रस के कवि के रूप में स्थापित हैं। 'दिनकर' स्वतन्त्रता पूर्व एक विद्रोही कवि के रूप में स्थापित हुए और स्वतन्त्रता के बाद 'राष्ट्रकवि' के नाम से जाने गये। वे छायावादोत्तर कवियों की पहली पीढ़ी के कवि थे। एक ओर उनकी कविताओ में ओज, विद्रोह, आक्रोश और क्रान्ति की पुकार है तो दूसरी ओर कोमल श्रृंगारिक भावनाओं की अभिव्यक्ति है। इन्हीं दो प्रवृत्तियों का चरम उत्कर्ष हमें उनकी कुरुक्षेत्र और उर्वशी नामक कृतियों में मिलता है।दिनकर' जी का जन्म 24 सितंबर 1908 को बिहार के बेगूसराय जिले के सिमरिया गाँव में एक सामान्य किसान 'रवि सिंह' तथा उनकी पत्नी 'मनरूप देवी' के पुत्र के रूप में हुआ था। दिनकर दो वर्ष के थे, जब उनके पिता का देहावसान हो गया। परिणामतः दिनकर और उनके भाई–बहनों का पालन–पोषण उनकी विधवा माता ने किया। दिनकर का बचपन और कैशोर्य देहात में बीता, जहाँ दूर तक फैले खेतों की हरियाली, बांसों के झुरमुट, आमों के बगीचे और कांस के विस्तार थे। प्रकृति की इस सुषमा का प्रभाव दिनकर के मन में बस गया, पर शायद इसीलिए वास्तविक जीवन की कठोरताओं का भी अधिक गहरा प्रभाव पड़ा।

संस्कृत के एक पंडित के पास अपनी प्रारंभिक शिक्षा प्रारंभ करते हुए दिनकर जी ने गाँव के 'प्राथमिक विद्यालय' से प्राथमिक शिक्षा प्राप्त की एवं निकटवर्ती बोरो नामक ग्राम में 'राष्ट्रीय मिडिल स्कूल' जो सरकारी शिक्षा व्यवस्था के विरोध में खोला गया था, में प्रवेश प्राप्त किया। यहीं से इनके मनोमस्तिष्क में राष्ट्रीयता की भावना का विकास होने लगा था। हाई स्कूल की शिक्षा इन्होंने 'मोकामाघाट हाई स्कूल' से प्राप्त की। इसी बीच इनका विवाह भी हो चुका था तथा ये एक पुत्र के पिता भी बन चुके थे। 1928 में मैट्रिक के बाद दिनकर ने पटना विश्वविद्यालय से 1932 में इतिहास में बी. ए. ऑनर्स किया। उन्होंने संस्कृत, बांग्ला, अंग्रेजी और उर्दू का गहन अध्ययन किया था।बी. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद वे एक विद्यालय में अध्यापक हो गये। 1934 से 1947 तक बिहार सरकार की सेवा में सब–रजिस्टार और प्रचार विभाग के उपनिदेशक पदों पर कार्य किया। रेणुका और हुंकार की कुछ रचनाऐं यहाँ–वहाँ प्रकाश में आईं और अंग्रेज प्रशासकों को समझते देर न लगी कि वे एक गलत आदमी को अपने तंत्र का अंग बना बैठे हैं और दिनकर की फाइल तैयार होने लगी, बात–बात पर कैफियत तलब होती और चेतावनियाँ मिला करतीं। 4 वर्ष में 22 बार उनका तबादला किया गया। 1947 में देश स्वाधीन हुआ और वह बिहार विश्वविद्यालय में हिन्दी के प्रध्यापक व विभागाध्यक्ष नियुक्त होकर मुजफ्फरपुर पहुँचे। 1952 में जब भारत की प्रथम संसद का निर्माण हुआ, तो उन्हें राज्यसभा का सदस्य चुना गया और वह दिल्ली आ गए। दिनकर 12 वर्ष तक संसद–सदस्य रहे, बाद में उन्हें सन 1964 से 1965 ई. तक भागलपुर विश्वविद्यालय का कुलपति नियुक्त किया गया। लेकिन अगले ही वर्ष भारत सरकार ने उन्हें 1965 से 1971 ई. तक अपना हिन्दी सलाहकार नियुक्त किया और वह फिर दिल्ली लौट आए।

२.काव्यगत विशेषताएँ

२.१भाव पक्ष

1.राष्ट्रीयता का स्वर राष्ट्रीय चेतना के कवि दिनकर जी राष्ट्रीयता को एसबसे बड़ा धर्म समझते हैं। इनकी कृतियाँ त्याग, बलिदान एवं राष्ट्रप्रेम की भावना से परिपूर्ण हैं। दिनकर जी ने भारत के कण–कण को जगाने का प्रयास किया। इनमें ह्रदय एवं बुद्धि का अद्भुत समन्वय था। इसी कारण इनका कवि रूप जितना सजग है, विचारक रूप उतना ही प्रखर है।

2.प्रगतिशीलता दिनकर जी ने अपने समय के प्रगतिशील दृष्टिकोण को अपनाया। इन्होंने उजड़ते खलिहानों, जर्जरकाय कृषकों और शोषित मजदूरों के कार्मिक चित्र अंकित किए हैं। दिनकर जी की 'हिमालय','ताण्डव', 'बोधिसत्व', 'कस्मै दैवाय', 'पाटलिपुत्र की गंगा' आदि रचनाएँ प्रगतिवादी विचारधारा पर आधारित हैं।

3.प्रेम एवं सौन्दर्य ओज एवं क्रान्तिकारिता के कवि होते हुए भी दिनकर जी के अन्दर एक सुकुमार कल्पनाओं का कवि भी विद्यमान है। इनके द्वारा रचित काव्य ग्रन्थ 'रसवन्ती' तो प्रेम एवं शृंगार की खान है।

4.रस–निरूपण दिनकर जी के काव्य का मूल स्वर ओज है। अतः ये मुख्यतः वीर रस के कवि हैं। शृंगार रस का भी इनके काव्यों में सुन्दर परिपाक हुआ है। वीर रस के सहायक के रूप में रौद्र रस, जन सामान्य की व्यथा के चित्रण में करुण रस और वैराग्य प्रधान स्थलों पर शान्त रस का भी प्रयोग मिलता है।

२.२कला पक्ष

1. भाषा दिनकर जी भाषा के मर्मज्ञ हैं। इनकी भाषा सरल, सुबोध एवं व्यावहारिक है, जिसमें सर्वत्र भावानुकूलता का गुण पाया जाता है। इनकी अनुरूप भाषा प्रायः संस्कृत की तत्सम शब्दावली से युक्त है, परन्तु विषय के इन्होंने न केवल तद्भव अपितु उर्दू, बांग्ला और अंग्रेजी के प्रचलित शब्दों का भी प्रयोग किया है।

2. शैली ओज एवं प्रसाद इनकी शैली के प्रधान गुण हैं। प्रबन्ध और मुक्तक दोनों ही काव्य शैलियों में इन्होंने अपनी रचनाएँ सफलतापूर्वक प्रस्तुत की हैं। मुक्तक में गीत मुक्तक एवं पाठ्य मुक्तक दोनों का ही समन्वय है।
3. छन्द परम्परागत छन्दों में दिनकर जी के प्रिय छन्द हैं–गीतिका, सार, सरसी, हरिगीतिका, रोला, रूपमाला आदि। नए छन्दों में अतुकान्त मुक्तक, चतुष्पदी आदि का प्रयोग दिखाई पड़ता है। प्रीति इनका स्वनिर्मित छन्द है, जिसका प्रयोग 'रसवन्ती' में किया गया है। कहीं–कहीं लावनी, बहर, गजल जैसे लोक प्रचलित छन्द भी प्रयुक्त हुए हैं।
4. अलंकार अलंकारों का प्रयोग इनके काव्य में चमत्कार–प्रदर्शन के लिए नहीं, बल्कि कविता की व्यंजना–शक्ति बढ़ाने के लिए या काव्य की शोभा बढ़ाने के लिए किया गया है। उपमा, रूपक,उत्प्रेक्षा, दृष्टान्त, व्यतिरेक, उल्लेख, मानवीकरण आदि अलंकारों का प्रयोग इनके काव्य में स्वाभाविक रूप में हुआ है।रामधारी सिंह 'दिनकर' की गणना आधुनिक युग के सर्वश्रेष्ठ कवियों में की जाती है। विशेष रूप से राष्ट्रीय चेतना एवं जागृति उत्पन्न करने वाले कवियों में इनका विशिष्ट स्थान है। ये भारतीय संस्कृति के रक्षक, क्रान्तिकारी चिन्तक, अपने युग का प्रतिनिधित्व करने वाले हिन्दी के गौरव हैं, जिन्हें पाकर हिन्दी साहित्य वास्तव में धन्य हो गया।

उन्होंने सामाजिक और आर्थिक समानता और शोषण के खिलाफ कविताओं की रचना की। एक प्रगतिवादी और मानववादी कवि के रूप में उन्होंने ऐतिहासिक पात्रों और घटनाओं को ओजस्वी और प्रखर शब्दों का तानाबाना दिया। उनकी महान रचनाओं में रश्मिरथी और परशुराम की प्रतीक्षा शामिल है। उर्वशी को छोड़कर दिनकर की अधिकतर रचनाएँ वीर रस से ओतप्रोत है। भूषण के बाद उन्हें वीर रस का सर्वश्रेष्ठ कवि माना जाता है।ज्ञानपीठ से सम्मानित उनकी रचना उर्वशी की कहानी मानवीय प्रेम, वासना और सम्बन्धों के इर्द–गिर्द घूमती है। उर्वशी स्वर्ग परित्यक्ता एक अप्सरा की कहानी है। वहीं, कुरुक्षेत्र, महाभारत के शान्ति–पर्व का कवितारूप है। यह दूसरे विश्वयुद्ध के बाद लिखी गयी रचना है। वहीं सामधेनी की रचना कवि के सामाजिक चिन्तन के अनुरुप हुई है। संस्कृति के चार अध्याय में दिनकरजी ने कहा कि सांस्कृतिक, भाषाई और क्षेत्रीय विविधताओं के बावजूद भारत एक देश है। क्योंकि सारी विविधताओं के बाद भी, हमारी सोच एक जैसी है।

२.३ काव्य कृतियाँ

बारदोली–विजय संदेश (1928), प्रणभंग (1929), रेणुका (1935), हुंकार (1938), रसवन्ती (1939), द्वंद्वगीत (1940), कुरूक्षेत्र (1946), धूप–छाँह (1947), सामधेनी (1947), बापू (1947), इतिहास के आँसू (1951), धूप और धुआँ (1951), मिर्च का मजा (1951), रश्मिरथी (1952), दिल्ली (1954), नीम के पत्ते (1954), नील कुसुम (1955), सूरज का ब्याह (1955), चक्रवाल (1956), कवि–श्री (1957), सीपी और शंख (1957), नये सुभाषित (1957), लोकप्रिय कवि दिनकर (1960), उर्वशी (1961), परशुराम की प्रतीक्षा (1963), आत्मा की आँखें (1964), कोयला और कवित्व (1964), मृत्ति–तिलक (1964), दिनकर की सूक्तियाँ (1964), हारे को हरिनाम (1970), संचियता (1973), दिनकर के गीत (1973), रश्मिलोक (1974), उर्वशी तथा अन्य शृंगारिक कविताएँ (1974)।

२.४ गद्य कृतियाँ

मिट्टी की ओर 1946, चित्तौड़ का साका 1948, अर्धनारीश्वर 1952, रेती के फूल 1954, हमारी सांस्कृतिक एकता 1955, भारत की सांस्कृतिक कहानी 1955, संस्कृति के चार अध्याय 1956, उजली आग 1956, देश–विदेश 1957, राष्ट्र–भाषा और राष्ट्रीय एकता 1955, काव्य की भूमिका 1958, पन्त–प्रसाद और मैथिलीशरण 1958, वेणुवन 1958, धर्म, नैतिकता और विज्ञान 1969, वट–पीपल 1961, लोकदेव नेहरू 1965, शुद्ध कविता की खोज 1966, साहित्य–मुखी 1968, राष्ट्रभाषा आंदोलन और गांधीजी

1968, हे राम! 1968, संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ 1970, भारतीय एकता 1971, मेरी यात्राएँ 1971, दिनकर की डायरी 1973, चेतना की शिला 1973, विवाह की मुसीबतें 1973, आधुनिक बोध 1973। दिनकर जी की प्रायः 50 कृतियाँ प्रकाशित हुई हैं। हिन्दी काव्य छायावाद का प्रतिलोम है, यह कहना तो शायद उचित नहीं होगा पर इसमें सन्देह नहीं कि हिन्दी काव्य जगत पर छाये छायावादी कुहासे को काटने वाली शक्तियों में दिनकर की प्रवाहमयी, ओजस्विनी कविता के स्थान का विशिष्ट महत्त्व है। दिनकर छायावादोत्तर काल के कवि हैं, अतः छायावाद की उपलब्धियाँ उन्हें विरासत में मिलीं पर उनके काव्योत्कर्ष का काल छायावाद की रंगभरी सन्ध्या का समय था।

३.द्विवेदी युग और छायावाद

कविता के भाव छायावाद के उत्तरकाल के निष्प्रभ शोभादीपों से सजे–सजाये कक्ष से ऊब चुके थे, बाहर की मुक्त वायु और प्राकृतिक प्रकाश और चाहतेताप का संस्पर्श थे। वे छायावाद के कल्पनाजन्य निर्विकार मानव के खोखलेपन से परिचित हो चुके थे, उस पार की दुनिया के अलभ्य सौन्दर्य का यथेष्ट स्वप्न दर्शन कर चुके थे, चमचमाते प्रदेश में संवेदना की मरीचिका के पीछे दौड़ते थक चुके थे, उस लाक्षणिक और अस्वाभिक भाषा शैली से उनका जी भर चुका था, जो उन्हें बार–बार अर्थ की गहराइयों की झलक सी दिखाकर छल चुकी थी। उन्हें अपेक्षा थी भाषा में द्विवेदी युगीन स्पष्टता की, पर उसकी शुष्कता की नहीं, व्यक्ति और परिवेश के वास्तविक संस्पर्श की, सहजता और शक्ति की। 'बच्चन' की कविता में उन्हें व्यक्ति का संस्पर्श मिला, दिनकर के काव्य में उन्हें जीवन समाज और परिचित परिवेश का संस्पर्श मिला। दिनकर का समाज व्यक्तियों का समूह था, केवल एक राजनीतिक तथ्य नहीं था।आरम्भ में दिनकर ने छायावादी रंग में कुछ कविताएँ लिखीं, पर जैसे–जैसे वे अपने स्वर से स्वयं परिचित होते गये, अपनी काव्यानुभूति पर ही अपनी कविता को आधारित करने का आत्म विश्वास उनमें बढ़ता गया, वैसे ही वैसे उनकी कविता छायावाद के प्रभाव से मुक्ति पाती गयी पर छायावाद से उन्हें जो कुछ विरासत में मिला था, जिसे वे मनोनुकूल पाकर अपना चुके थे, वह तो उनका हो ही गया।

उनकी काव्यधारा जिन दो कुलों के बीच में प्रवाहित हुई, उनमें से एक छायावाद था। भूमि का ढलान दूसरे कुल की ओर था, पर धारा को आगे बढ़ाने में दोनों का अस्तित्व अपेक्षित और अनिवार्य था। दिनकर अपने को द्विवेदी युगीन और छायावादी काव्य पद्धतियों का वारिस मानते थे। उन्हीं के शब्दों में "पन्त के सपने हमारे हाथ में आकर उतने वायवीय नहीं रहे, जितने कि वे छायावाद काल में थे," किन्तु द्विवेदी युगीन अभिव्यक्ति की शुभ्रता हम लोगों के पास आते–जाते कुछ रंगीन अवश्य हो गयी। अभिव्यक्ति की स्वच्छन्दता की नयी विरासत हमें आप से आप प्राप्त हो गयी।

दिनकर ने अपने कृतित्व के विषय में एकाधिक स्थानों पर विचार किया है। सम्भवतः हिन्दी का कोई कवि अपने ही कवि कर्म के विषय में दिनकर से अधिक चिन्तन व आलोचना न करता होगा। वह दिनकर की आत्मरति का नहीं, अपने कवि कर्म के प्रति उनके दायित्व के बोध का प्रमाण है कि वे समय–समय पर इस प्रकार आत्म परीक्षण करते रहे। इसी कारण अधिकतर अपने बारे में जो कहते थे, वह सही होता था। उनकी कविता प्रायः छायावाद की अपेक्षा द्विवेदी युगीन स्पष्टता, प्रसाद गुण के प्रति आस्था और मोह, अतीत के प्रति आदर प्रदर्शन की प्रवृत्ति, अनेक बिन्दुओं पर दिनकर की कविता द्विवेदी युगीन काव्यधारा का आधुनिक ओजस्वी, प्रगतिशील संस्करण जान पड़ती है। उनका स्वर भले ही सर्वदा, सर्वथा 'हुंकार' न बन पाता हो, 'गुंजन' तो कभी भी नहीं बनता।

४.साहित्यिक सर्वेक्षण

हजारी प्रसाद द्विवेदी: वे अहिन्दीभाषी जनता में भी बहुत लोकप्रिय थे क्योंकि उनका हिन्दी प्रेम दूसरों की अपनी मातृभाषा के प्रति श्रद्धा और प्रेम का विरोधी नहीं, बल्कि प्रेरक था।

हरिवंशराय बच्चनः दिनकर जी ने श्रमसाध्य जीवन जिया। उनकी साहित्य साधना अपूर्व थी। कुछ समय पहले मुझे एक सज्जन ने कलकत्ता से पत्र लिखा कि दिनकर को ज्ञानपीठ पुरस्कार मिलना कितना उपयुक्त है ? मैंने उन्हें उत्तर में लिखा था कि यदि चार ज्ञानपीठ पुरस्कार उन्हें मिलते, तो उनका सम्मान होता– गद्य, पद्य, भाषणों और हिन्दी प्रचार के लिए।
अज्ञेयः उनकी राष्ट्रीयता चेतना और व्यापकता सांस्कृतिक दृष्टि, उनकी वाणी का ओज और काव्यभाषा के तत्त्वों पर बल, उनका सात्त्विक मूल्यों का आग्रह उन्हें पारम्परिक रीति से जोड़े रखता है।
रामवृक्ष बेनीपुरीः हमारे क्रान्ति–युग का सम्पूर्ण प्रतिनिधित्व कविता में इस समय दिनकर कर रहा है। क्रान्तिवादी को जिन–जिन हृदय–मंथनों से गुजरना होता है, दिनकर की कविता उनकी सच्ची तस्वीर रखती है।
नामवर सिंहः दिनकर जी सचमुच ही अपने समय के सूर्य की तरह तपे। मैंने स्वयं उस सूर्य का मध्याह्न भी देखा है और अस्ताचल भी। वे सौन्दर्य के उपासक और प्रेम के पुजारी भी थे। उन्होंने 'संस्कृति के चार अध्याय' नामक विशाल ग्रन्थ लिखा है, जिसे पं. जवाहर लाल नेहरू ने उसकी भूमिका लिखकर गौरवन्वित किया था। दिनकर बीसवीं शताब्दी के मध्य की एक तेजस्वी विभूति थे।
राजेन्द्र यादवः दिनकरजी की रचनाओं ने मुझे बहुत प्रेरित किया।
काशीनाथ सिंहः दिनकरजी राष्ट्रवादी और साम्राज्य–विरोधी कवि थे।

दिनकर का नाम प्रगतिवादी कवियों में लिया जाता था, पर अब शायद साम्यवादी विचारक उन्हें उस विशिष्ट पंक्ति में स्थान देने के लिए तैयार न हों, क्योंकि आज का दिनकर ''अरुण विश्व की काली जय हो! लाल सितारों वाली जय हो''? के लेखक से बहुत दूर जान पड़ता है। जो भी हो, साम्यवादी विचारक आज के दिनकर को किसी भी पंक्ति में क्यों न स्थान देना चाहे, इससे इंकार किया ही नहीं जा सकता कि जैसे बच्चन मूलतः एकांत व्यक्तिवादी कवि हैं, वैसे ही दिनकर मूलतः सामाजिक चेतना के चारण हैं।

५.दिनकर की शैली

दिनकर आधुनिक कवियों की प्रथम पंक्ति में बैठने के अधिकारी हैं, इस पर दो राय नहीं हो सकती। उनकी कविता में विचार तत्त्व की कमी नहीं है, यदि अभाव है तो विचार तत्त्व के प्राचुर्य के अनुरूप गहराई का। उनके व्यक्तित्व की छाप उनकी प्रत्येक पंक्ति पर है, पर कहीं–कहीं भावक को व्यक्तित्व की जगह वक्तृत्व ही मिल पाता है। दिनकर की शैली में प्रसादगुण यथेष्ट हैं, प्रवाह है, ओज है, अनुभूति की तीव्रता है, सच्ची संवेदना है। यदि कमी खटकती है तो तरलता की, घुलावट की। पर यह कमी कम ही खटकती है, क्योंकि दिनकर ने प्रगीत कम लिखे हैं। उनका जीवन–दर्शन उनका अपना जीवन–दर्शन है, उनकी अपनी अनुभूति से अनुप्राणित, उनके अपने विवेक से अनुमोदित परिणामतः निरन्तर परिवर्तनशील है। दिनकर प्रगतिवादी, जनवादी, मानववादी आदि रहे हैं और आज भी हैं, पर 'रसवन्ती' की भूमिका में यह कहने में उन्हें संकोच नहीं हुआ कि ''प्रगति शब्द में जो नया अर्थ ठूँसा गया है, उसके फलस्वरूप हल और फावड़े कविता का सर्वोच्च विषय सिद्ध किये जा रहे हैं और वातावरण ऐसा बनता जा रहा है कि जीवन की गहराइयों में उतरने वाले कवि सिर उठाकर नहीं चल सकें।''गांधीवादी और अहिंसा के हामी होते हुए भी 'कुरुक्षेत्र' में वह कहते नहीं हिचके कि कौन केवल आत्मबल से जूझकर, जीत सकता देह का संग्राम है, पाशविकता खड्ग जो लेती उठा, आत्मबल का एक वश चलता नहीं। योगियों की शक्ति से संसार में, हारता लेकिन नहीं समुदाय है।

६.बाल–साहित्य

जो कवि सामाजिक उत्तरदायित्व के प्रति सचेत हैं तथा जो अपने लक्ष्य के प्रति समर्पित हैं, प्रतिबद्ध हैं, वे बाल–साहित्य लिखने के लिए भी अवकाश निकाल लेते हैं। विश्व–कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर जैसे

अतल–स्पर्शी रहस्यवादी महाकवि ने कितना बाल–साहित्य लिखा है, यह सर्वविदित है। अतः दिनकर जी की लेखनी ने यदि बाल–साहित्य लिखा है तो वह उनके महत्त्व को बढ़ाता ही है। बाल–काव्य विषयक उनकी दो पुस्तिकाएँ प्रकाशित हुई हैं कृ'मिर्च का मजा' और 'सूरज का ब्याह'। 'मिर्च का मजा' में सात कविताएँ और 'सूरज का ब्याह' में नौ कविताएँ संकलित हैं। 'मिर्च का मजा' में एक मूर्ख काबुलीवाले का वर्णन है, जो अपने जीवन में पहली बार मिर्च देखता है। मिर्च को वह कोई फल समझ जाता है–

सोचा, क्या अच्छे दाने हैं, खाने से बल होगा,
यह जरूर इस मौसम का कोई मीठा फल होगा।

'सूरज का ब्याह' में एक वृद्ध मछली का कथन पर्याप्त तर्क–संगत है।

७. ओजस्वी–तेजस्वी स्वरूप

अलाउद्दीन खिलजी ने जब चित्तौड़ पर कब्जा कर लिया, तब राणा अजय सिंह अपने भतीजे हम्मीर और बेटों को लेकर अरावली पहाड़ पर कैलवारा के किले में रहने लगे। राजा मुंज ने वहीं उनका अपमान किया था, जिसका बदला हम्मीर ने चुकाया। उस समय हम्मीर की उम्र सिर्फ ग्यारह साल की थी। आगे चलकर हम्मीर बहुत बड़ा योद्धा निकला और उसके हठ के बारे में यह कहावत चल पड़ी कि 'तिरिया तेल हमीर हठ चढ़ै न दूजी बार।' इस रचना में दिनकर जी का ओजस्वी–तेजस्वी स्वरूप झलका है। क्योंकि इस कविता की विषय–सामग्री उनकी रुचि के अनुरूप थी। बालक हम्मीर कविता राष्ट्रीय गौरव से परिपूर्ण रचना है। इस कविता की निम्नलिखित पंक्तियाँ पाठक के मन में गूँजती रहती हैं–

धन है तन का मैल, पसीने का जैसे हो पानी,
एक आन को ही जीते हैं इज्जत के अभिमानी।

८.अध्ययन पद्धति

यह आलेख मुख्य रूप से वर्णन एवं विश्लेषण पर आधारित है । साथ ही ऐतिहासिक अध्ययन पद्धति के आधार पर विभिन्न संस्थाओं, कार्यालयों एवं पुस्तकालयों से तथ्यों का संकलन किया गया है । वर्तमान अध्ययन मुख्य रूप से द्वैतियक स्रोत पर ही आधारित है।

९. निष्कर्ष

दिनकर की प्रगतिशीलता साम्यवादी लीग पर चलने की प्रक्रिया का साहित्यिक नाम नहीं है, एक ऐसी सामाजिक चेतना का परिणाम है, जो मूलतः भारतीय है और राष्ट्रीय भावना से परिचालित है। उन्होंने राजनीतिक मान्यताओं को राजनीतिक मान्यताएँ होने के कारण अपने काव्य का विषय नहीं बनाया, न कभी राजनीतिक लक्ष्य सिद्धि को काव्य का उद्देश्य माना, पर उन्होंने निःसंकोच राजनीतिक विषयों को उठाया है और उनका प्रतिपादन किया है, क्योंकि वे काव्यानुभूति की व्यापकता स्वीकार करते हैं। राजनीतिक दायित्वों, मान्यताओं और नीतियों का बोध सहज ही उनकी काव्यानुभूति के भीतर समा जाता है। इनकी अधिकांश रचनाओं में काव्य की शैली रचना के विषय और 'मूड' के अनुरूप हैं। उनके चिन्तन में विस्तार अधिक और गहराई कम है, पर उनके विचार उनके अपने ही विचार हैं। उनकी काव्यनुभूति के अविच्छेद्य अंग हैं, यह स्पष्ट है। यह दिनकर की कविता का विशिष्ट गुण है कि जहाँ उसमें अभिव्यक्ति की तीव्रता है, वहीं उसके साथ ही चिन्तन–मनन की प्रवृत्ति भी स्पष्ट दिखती है।

संदर्भ स्रोत

१.ठक्कर, पुष्पा (1986). दिनकर काव्य में युगचेतना, अरविंद प्रकाशन, मुम्बई।
२.मिश्र, शिव सागर (1981). दिनकर एक सहज पुरुष, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।

३.सिन्हा, सावित्री (1970).दिनकर, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली।
४.राय, गोपाल, डॉ सकलदेव शर्मा(1975).राष्ट्र कवि दिनकर, पटना, ग्रंथ निकेतन।
५.शर्मा, विनोद बाला (1986). दिनकर काव्य में जीवन दर्शन, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली।
६.शर्मा, टीकाराम डॉ सुशीला शर्मा, (1977). उर्वशीः संवेदना और शिल्प, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
७.गुप्त, मन्मथनाथ (1967). रामधारी सिंह दिनकरः जीवन परिचय और प्रतिनिधि रचनाएँ, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली।